अध्याय – 2
चित्र के तत्त्व

जिन मूलभूत अवयवों की उपस्थिति से कला कृति का निर्माण किया जाता है उन्हें कला के तत्त्व कहते हैं। इन तत्त्वों के समुचित प्रयोग द्वारा किसी काल्पनिक संयोजन को मूर्त रूप दिया जा सकता है। इनके अभाव में किसी भी विचार को कलाकृति के रूप में प्रकट नहीं किया जा सकता। इन तत्त्वों का अपना अपना महत्त्व है। कलाकार अपनी सृजन शक्ति के अनुसार इन कला तत्त्वों का प्रयोग कर चित्र रचना करता है। इन तत्त्वों के प्रयोग की भिन्नता से कलाकृति की विशिष्टता का ज्ञान होता है। कला जगत में जो तत्व सर्वमान्य हैं वे इस प्रकार हैं :–

1. रेखा
2. रंग
3. रूप
4. तान
5. पोत
6. अंतराल

रेखा

दो बिन्दुओं को मिलाने वाली सूक्ष्म अथवा गौण दूरी को रेखा कहते हैं। इसके आधार पर सीमा का ज्ञान होता है और गति का निर्देशन भी मिलता है। चित्र में रेखा को प्रथम तत्त्व के रूप में मान्यता प्राप्त है। चित्रकला का आदिम स्वरूप भी रेखांकन था। रेखाओं के विभिन्न प्रकार हैं इसके प्रभाव भी इनके अनुरूप होते हैं। प्रमुख प्रचलित रेखाएं व उनके प्रभाव निम्नलिखित हैं –

(1) सीधी खड़ी रेखा (ऊर्ध्वाकार) : यह रेखा धरातल पर सीधी ऊपर की ओर जाती अंकित की जाती है। मीनार, टावर, बोतल आदि के लिए यह रेखा उपयुक्त होती है। यह रेखा, शक्ति, स्थायित्व, दृढता, निश्चय एवं प्रगति को दर्शाती है।

(2) क्षितिजाकार रेखा : यह धरातल पर सीधी पड़ी हुई अंकित की जाती है। (क्षितिज स्वरूप होने के कारण इसे क्षितिज रेखा भी कहते हैं) यह रेखा शान्त, निश्चेष्ट, विश्राम आदि के लिए प्रयोग होती है।

(3) तिरछी रेखाएँ (कर्णवत) : इस प्रकार की रेखाएं क्षितिज से जो कोण बनाती हैं वह 80^0 से कम या 100^0 से अधिक होता है। ये रेखाएं अस्थिरता, वेग आदि को अभिव्यक्त करती हैं।

(4) कोणीय रेखाएँ : इस प्रकार की रेखाएं बिजली की कड़कड़ाहट, संघर्ष, तनाव आदि को प्रतिबिम्बित करती है।

(5) एक पुन्जीय रेखाएँ : ये रेखाएँ एक बिन्दु से प्रकट होकर चहुं ओर बढ़ती हैं। इनसे प्रसार, खिलना, प्रकाशपुंज, विस्तार आदि के भाव प्रकट होते हैं।

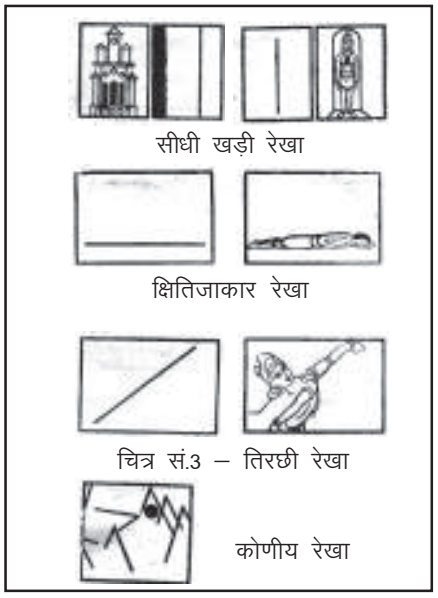

(6) चक्राकार रेखाएँ (सर्पाकार) : एक बिन्दु से प्रारम्भ होकर ये रेखाएं उसी बिन्दु के चारों ओर घूमती रहती हैं। इनसे तनाव, उत्तेजना, सम्प्रेषण आदि के भाव प्रकट किये जा सकते हैं।

(7) लयात्मक (प्रवाही) रेखाएँ : इन्हें लहरदार रेखाएं भी कहते हैं। इन रेखाओं से पानी की लहरें, तरंगें, संगीतात्मकता आदि की अभिव्यक्ति होती है।

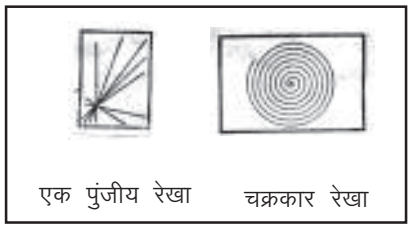

रेखांकन का प्रकार

विविध विषयवस्तु की सटीक प्रस्तुति के लिए भिन्न भिन्न प्रकार की रेखाएँ और रेखांकन पद्धति का प्रयोग किया जाता है। मुख्यरूप से तीन प्रकार का रेखांकन विशेष महत्वपूर्ण होता है।

(1) स्वतन्त्र रेखांकन : वस्तु के मस्तिष्क पर पडने वाले प्रभावों के आधार पर अपनी इच्छा शक्ति के अनुसार चित्रण करना। इस विधि से अनेक यूरोपीय चित्रकारों ने कला सृजना की है।

(2) स्मृति रेखांकन : कलाकार अपनी स्मरण शक्ति के आधार पर चित्रों का निर्माण करता है। यह स्मृति रेखांकन कहलाता है।

(3) प्रतिरूपात्मक रेखांकन : किसी यथार्थ वस्तु को वैसा ही अंकित करना अर्थात वस्तु या व्यक्ति का प्रतिरूप अंकित करना, प्रतिरूपात्मक रेखांकन कहलाता है। रेखांकन के उक्त विभाजन के अतिरिक्त भी कई प्रकार हैं जिसके आधार पर रेखांकन किया जाता है जैसे यांत्रिक रेखांकन, सीमान्त रेखांकन, सांकेतिक रेखांकन, प्रकृति रेखांकन, वस्तु रेखांकन आदि।

रंग (वर्ण)

रंग कोई स्थूल वस्तु नहीं है। यह हमारी आंखों पर पड़ने वाला एक प्रभाव मात्र है जिसे मस्तिष्क रंग की संज्ञा देता है। वास्तव में रंग प्रकाश का एक गुण है। सूर्य के प्रकाश में विभिन्न रंगों के भाव होते हैं। वस्तु से जो प्रकाश परावर्तित होता है उसे ही वस्तु का रंग मान लिया जाता है। प्रत्येक वस्तु की प्रकाश को परावर्तित करने की क्षमता भिन्न भिन्न होती है। क्षमता की इस भिन्नता के कारण वस्तु का रंग भी अलग अलग दिखाई देता है। वर्ण के तीन प्रमुख गुण होते हैं – (1) रंगत (2) मान (3) सघनता।

रंगत वर्ण की प्रकृति होती है। इससे रंगों का अन्तर स्पष्ट होता है जैसे लालपन, नीलापन, हरापन आदि। **मान** रंगत के हल्के व गहरेपन को कहते हैं। जैसे लाल, गहरा लाल, हल्का लाल आदि। रंगत में सफेद या काले रंग के प्रयोग से रंगत का मान बढ़ाया या घटाया जा सकता है। बढाने के लिए सफेद व घटाने के लिए काले रंग का उपयोग होता है। **सघनता** से वर्ण तत्त्व की शुद्धता का ज्ञान होता है, जो रंग तीव्र होगा वह उतना ही शुद्ध होगा तथा जिसमें धूमिलता होगी वह कम सघन अथवा अशुद्ध होता है।

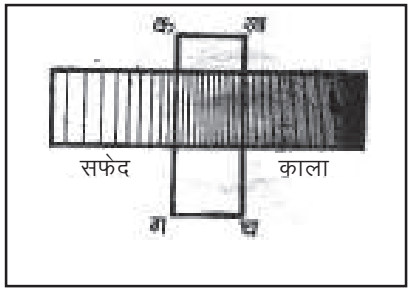

वर्ण भेद : रंगों को कई भागों में बांटा जाता है लेकिन मूल विभाजन इस प्रकार से होता है –

1. मुख्य रंग : ऐसे रंग जो किसी दूसरे रंग को मिलाकर नहीं बनाये जा सकते हैं। वे मुख्य रंग कहलाते हैं। लाल, पीला और नीला मुख्य रंग हैं इनके मिश्रण से असंख्य रंगों का निर्माण किया जा सकता है।

ये रंग पूर्णतः शुद्ध होते हैं।

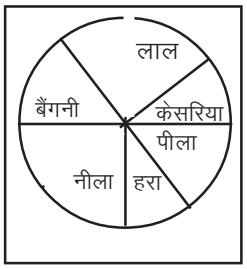

2. द्वितीय रंग : दो मुख्य रंगों को मिलाने से प्राप्त रंग द्वितीय रंग कहलाते हैं। इन्हें मिश्रित रंग की श्रेणी में रखा जाता है:–

लाल + नीला = बैंगनी

नीला + पीला = हरा

पीला + लाल = केसरिया

3. पूरक रंग (विरोधी) : दो मुख्य रंगों को मिलाने से जो द्वितीय रंग प्राप्त होता है वह शेष (तीसरे) मुख्य रंग का पूरक रंग होता है। वर्ण चक्र में एक दूसरे के आमने सामने आने वाले रंग एक दूसरे के पूरक होते हैं। उदाहरणार्थ लाल + पीला = केसरिया यह नीले रंग का पूरक है।

4. समीपवर्ती रंग : एक जैसी प्रकृति वाले रंगों को समीपवर्ती रंग कहते हैं। इन रंगों में एक ही जाति के रंग का वर्चस्व दिखता है जैसे लाल, केसरिया, लाल केसरिया आदि। इनमें लाल रंग सबमें उपस्थित है।

5. अवर्णीय रंग : श्याम एवं श्वेत रंगों को अवर्णीय रंग माना जाता है। लेकिन किसी भी रंगत की विभिन्न तानों के लिए दो रंग महत्त्वपूर्ण होते हैं।

रंगों के प्रभाव – किसी भी चित्र में रंग का ही दर्शक से प्रथम परिचय होता है। स्वाभाविक रूप से रंग आकर्षण की वस्तु है। विभिन्न रंगों के उनकी प्रकृति के अनुसार अलग–अलग प्रभाव होते हैं। रंगों को प्रकृति के आधार पर दो समूह या श्रेणियों में बांटा जाता है:–

1. गर्म रंग : ऐसे रंग जो तीव्र होते हैं तथा अधिक देर तक देखने से हमें थकान होती है उष्ण या गर्म रंग कहलाते हैं। जैसे पीला, केसरिया, लाल।

2. ठण्डे रंग : जो रंग सौम्य एवं शीतल होते हैं तथा जिन्हें हम अधिक देर तक देख सकते हैं ठण्डे रंगों की श्रेणी में माने जाते हैं जैसे हरा, नीला, बैंगनी आदि।

इन सभी रंगों के प्रयोग से विविध भावों का अंकन सुगमता से किया जाता है:–

1. लाल – युद्ध, क्रोध, उल्लास
2. पीला – प्रकाश, उष्मा, गर्व
3. नीला – भय, रात्रि, कामुकता
4. हरा – शांति, समृद्धि, विश्राम
5. नारंगी – प्रेरणा, अध्यात्म, ज्ञान, वीरता, राजसी
6. बैंगनी – दुःख, रहस्य, मृत्यु
7. सफेद – शांति, पवित्रता, उज्ज्वलता
8. श्याम (काला) – अधेरा, भय, दुःख, कपट, षड़यन्त्र

वर्ण प्रतिस्थापन – विविध श्रेणी या प्रकृति के रंगों को प्रयोग करते समय भी सावधानी रखनी चाहिए। भावों और विषयवस्तु की आवश्यकतानुसार चित्र में रंगों का प्रयोग किया जाता है। रंगों की पुनरावृत्ति, रंगत के मान को घटा या बढा कर, उचित संगति अथवा विरोधाभासी, ढंग से प्रयोग कर चित्र में सम्प्रेषणीयता व आकर्षण लाया जाता है।

वर्ण नियोजन (रंग संगति) – चित्र में रंगांकन (वर्ण नियोजन) की विभिन्न पद्धतियां हैं। कलाकार अपनी आवश्यकतानुसार इनका चयन करता है। निम्नलिखित रंग संगति महत्वपूर्ण है।

1. **समीपवर्ती रंग योजना :** वर्ण चक्र में पास–पास आने वाले रंगों का प्रयोग इस संगति से किया जाता है कि इस प्रकार के रंगों में कोई एक रंग सभी रंगों में कमोबेश उपस्थित रहता है जैसे लाल, लाल बैंगनी, बैंगनी आदि।
2. **पूरक रंग योजना :** इस प्रकार की रंग संगति में परस्पर विरोधी रंगों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की रंग संगति आकर्षक तो होती है पर संतुलन बनाये रखने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है।
3. **बहुवर्णीय रंग योजना :** इस प्रकार के वर्ण नियोजन में रंगों की कोई सीमा नहीं होती है बल्कि कलाकार स्वविवेक से एवं विषय वस्तु की आवश्यकतानुसार कितने भी रंग काम में ले सकता है।
4. **एकवर्णीय रंग योजना :** किसी एक ही रंग को लेकर उसकी विभिन्न तानों से चित्र को पूरा करना एक वर्णीय रंग योजना के अन्तर्गत माना जाता है। इस प्रकार की योजना में श्याम–श्वेत रंग का महत्त्व होता है।
5. **अवर्णीय (वर्ण शून्यता) :** केवल काले या सफेद रंगों की संगति का प्रयोग वर्ण शून्यता की श्रेणी में माना जाता है।
6. **त्रयी रंग योजना :** इस प्रकार की रंग योजना में वर्ण चक्र पर काल्पनिक त्रिभुज मानकर उसके तीनों कोणों वाले तीन रंगों का चयन किया जाता है अर्थात इसमें यदि एक रंग लाल है तो पीला और नीला शेष रंग होगें, एक रंग हरा है तो बैंगनी व केसरिया शेष रंग होंगे।

   इन रंग संगतियों के अलावा प्रखर, मंद, खण्डीय आदि रंग नियोजन विधियां भी प्रचलन में हैं।

रूप

किसी वस्तु या व्यक्ति की आकृति रूप कहलाती है। रूप का अपना आकार व वर्ण होता है जिससे उसकी पहचान बनती है। चित्रतल पर प्रथम बिन्दु के अंकन होते ही रूप का निर्माण प्रारम्भ हो जाता है। प्रायः रूप दो प्रकार के होते हैं –

सममित रूप (नियमित) : यदि किसी रूपाकार को मध्य से विभक्त किया जाए तो दोनों भाग एक दूसरे की विलोम आकृति वाले होंगे जैसे गिलास, फुटबाल, वर्ग, घन आदि। ऐसे रूप नियमित रूप कहलाते हैं। ये अपेक्षाकृत साधारण सौन्दर्यबोध वाले होते हैं।

असममित रूप (अनियमित) : असममित रूप में मध्य से दोनों ओर के भाग विभिन्नता युक्त होते हैं। ऐसे रूप गतिपूर्ण तथा अधिक सुन्दर संयोजन को अभिव्यक्त करते हैं। जैसे विषम त्रिभुज, केतली आदि।

रूप एवं अर्थसार : रूप का तात्पर्य किसी वस्तु या व्यक्ति की आकृति से है वही चित्र में प्रस्तुत विषय वस्तु को अर्थसार कहते हैं। प्रायः कलाकृति में दो प्रकार के अर्थसार माने गये हैं।

1. व्यक्तिगत – जिस कलाकृति का सम्बन्ध केवल कलाकार तक सीमित हो अर्थात उसमें प्रयुक्त विषय वस्तु कलाकार के लिए आत्मसन्तुष्टि मात्र हो, उसका अर्थसार व्यक्तिगत होता है। इसे निम्नस्तर का माना जाता है।

2. सामुदायिक – जब कलाकृति में प्रस्तुत भाव सम्पूर्ण समाज के लिए हो, जिनमें सबके मंगल की भावना हो वह सामुदायिक अर्थसार होता है। ऐसे अर्थसार वाली आकृति को श्रेष्ठ माना गया है। सच्ची कलाकृति में सामुदायिक अर्थसार होता है।

रूप के प्रभाव : सम एवं विषम रूपाकारों के मूल उद्‌गम में ज्यामितीय संरचनायें होती हैं। इन ज्यामितीय रूपाकारों के विभिन्न भाव होते हैं जिनके आधार पर कलाकार अपनी कृति में इनका चयन करता है।

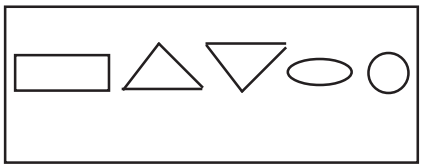

(अ) आयताकार रूप :– एकता, दृढता।

(ब) त्रिभुजाकार रूप :– प्रगति, निश्चय, आत्मनिर्भरता, संतुलन।

(स) विलोम त्रिभुजाकार रूप :– अशान्ति, असंतुलन, अधोगति।

(द) अण्डाकार रूप :– निरन्तरता, सौन्दर्य, सृजनात्मकता।

(य) वृत्ताकार रूप :– गति, तटस्थता, पूर्णता, विशालता।

रूप विविधता : कलाकृति को एकरसता से बचाने के लिये तथा विषयवस्तु की यथार्थपूर्ण अभिव्यक्ति के लिये अंकित रूपाकारों में विविधता होनी चाहिये। इसके लिये आकारों के अनुपात परिवर्तन, वर्णविविधता, छायाप्रकाश, पोत आदि के द्वारा श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

तान

किसी भी रंग के हल्के या गहरेपन को तान कहकर परिभाषित किया जाता है जैसे नीला, हल्का नीला, गहरा आदि। तान रंग में काले अथवा सफेद की उपस्थिति का परिणाम है। इन रंगों की मात्रा को घटाकर या बढाकर किसी भी रंग की विभिन्न तानें प्राप्त की जा सकती हैं। तान को मुख्यतः तीन भागों में बांटते हैं :–

अ. गहरा (छाया)

ब. मध्यम

स. हल्का (प्रकाशमान)

(हालांकि सफेद/काले के प्रयोग से अनेक तान प्राप्त की जा सकती हैं)

तान का महत्त्व : किसी भी चित्र में तान के अभाव में अधूरापन रहेगा। तान के द्वारा सपाट द्विआयामी चित्रभूमि पर गहराई का भ्रम उत्पन्न किया जा सकता है। यथार्थ अंकन के लिये तान आवश्यक तत्त्व है। क्षयवृद्धि, स्थितिजन्य लघुता आदि संयोजन सिद्धान्तों को स्थापित करने के लिये तान का होना अनिवार्य है। दूर–निकट, बड़ा–छोटा आदि को दर्शाने में तान की अहम भूमिका होती है। तान की उपस्थिति चित्र के भावात्मक पक्ष को भी संबल प्रदान करती है। चित्र में प्रयुक्त रंगतों में संतुलन स्थापित करना, चित्रभूमि का आनन्ददायी विभाजन, रूपाकारों को धूमिल अथवा ओजस्वी बनाना, प्रभावपूर्ण संयोजन तथा रहस्यमयी वातावरण के सृजन में तान की अहम भूमिका होती है।

तान के प्रभाव : तान के विभिन्न प्रभाव चित्रतल पर अपना महत्त्व दर्शाते हैं। इन प्रभावों द्वारा संयोजन को अधिक सशक्त बनाया जा सकता है। श्याम श्वेत रंगों द्वारा चित्र की प्रमुख रंगतों में संतुलन स्थापित किया जा सकता है। तान के प्रभाव को रंग का मान बदल कर बढ़ाया जा सकता है। सक्रिय एवं सहायक अन्तराल की संरचना में तान उल्लेखनीय योगदान करती है। चित्र में रिक्त स्थान या सहायक अन्तराल को तान के क्रमिक प्रयोग से नियन्त्रित किया जा सकता है वहीं आकृति द्वारा घेरे स्थान (सक्रिय अन्तराल) का महत्व व आकर्षण तान द्वारा बढ़ाया जा सकता है।

पोत

किसी वस्तु को छूने अथवा देखने से उसकी सतह (धरातल) के बारे में जो अनुभूति होती है (चिकनापन, खुरदरापन आदि) वह उस वस्तु के पोत को व्यक्त करती है अर्थात वस्तु के धरातल का गुण पोत कहलाता है। किसी भी वस्तु के वास्तववादी अंकन के लिये पोत की अनिवार्यता होती है। पोत तीन प्रकार का होता है।

1. प्राप्त : प्राप्त पोत वे होते हैं जो प्रकृति निर्मित वस्तुओं में होते हैं। वस्तुओं के चित्रण में स्पर्श द्वारा इन्हें अनुभव कर प्रयोग करने चाहिये।

2. अनुकृत : प्रकृति में अनुभूत पदार्थों को चित्रित करते समय उनके धरातलीय गुणों का अनुकरण शक्ति से चित्रतल पर आभास (भ्रम) उत्पन्न करना इस तरह के पोत की श्रेणी में गिने जाते हैं।

3. सृजित : यह कलाकार की सृजन शक्ति का परिचायक होता है। कलाकार अपने अनुभवों व यन्त्रों की सहायता से विविध प्रयोग करके नवीन प्रकार के धरातलीय प्रभाव चित्र पर उत्पन्न करता है। ऐसे पोत सृजित पोत माने जाते हैं। इनमें नवीनता व आकर्षण अधिक होता है।

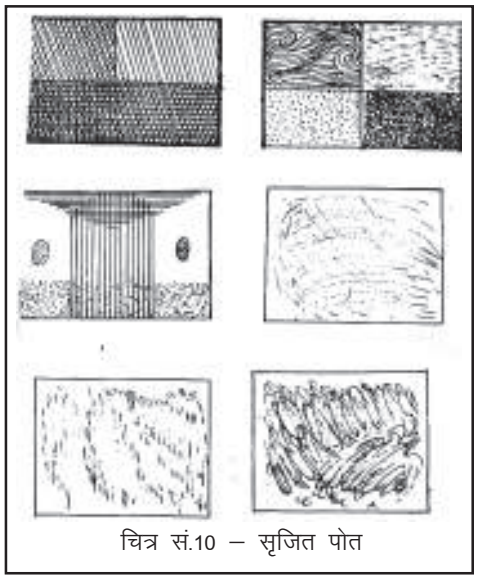
चित्र सं.10 – सृजित पोत

पोत का महत्त्व – चित्रतल पर यथार्थ अंकन की दृष्टि से पोत महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है। पोत की विविधता से अन्तराल को गति प्रदान कर उसकी एकरसता को समाप्त किया जा सकता है। संयोजन सिद्धान्तों की स्थापना में पोत की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। चिकने, खुरदरे, रूई, तेल, पत्थर, पानी आदि का अंकन पेात द्वारा ही रूपमभेद को प्राप्त करता है।

अन्तराल

वह सपाट स्थान जिस पर चित्रण कार्य किया जाता है उसे चित्रभूमि या अन्तराल कहा जाता है। यह द्विआयामी होता है। अन्तराल अथवा स्थान के अभाव में कलाकृति का सृजन संभव नहीं होता है।

किसी भी कलाकृति के लिये चित्रतल (अन्तराल) का विभाजन किया जाता है यह सरल या जटिल हो सकता है। चित्रतल पर प्रथम बिन्दु के अंकित होते ही अक्षत भूमि पर तनाव उत्पन हो जाता है और चित्रतल सक्रिय तथा सहायक अन्तराल के रूप में बंट जाता है। रूपाकार द्वारा घेरा गया स्थान सक्रिय अन्तराल के रूप में और शेष स्थान सहायक अन्तराल के रूप में जाना जाता है। प्रायः अन्तराल को दो प्रकार से विभाजित किया जाता है।

1. सम विभक्ति
2. विषम विभक्ति

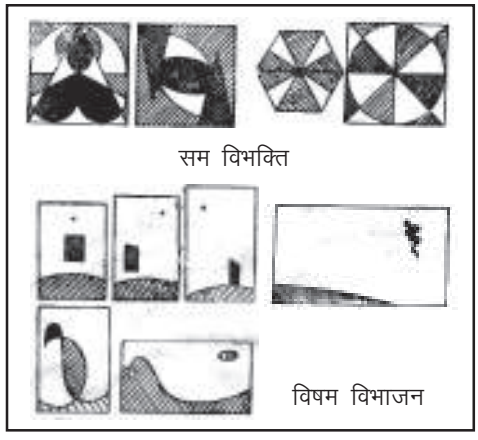
सम विभक्ति

विषम विभाजन

सम विभक्ति में चित्रतल को इस प्रकार विभाजित किया जाता है कि दोनों ओर समान रूपाकार रहें। विषम विभाजन में ऐसा होना जरूरी नहीं हेाता। यह विभाजन अधिक नन्दतिक माना गया है। इसमें मौलिकता होती है।

इसके अलावा यूनानी पद्धति (स्वर्णीय विभाजन सिद्धान्त) तथा कर्णवत विभाजन पद्धति भी लोकप्रिय तल विभाजन की विधियां हैं। स्वर्णिम विभाजन पद्धति में चित्रतल को कितने ही भागों में बाँटा जा सकता है। इससे न केवल चित्रभूमि के विभाजन में संतुलन रहता है बल्कि विविधतापूर्ण होने से आकर्षण भी बना रहता है।

अन्तराल और रूप व्यवस्था

स्पष्टतः द्विआयामी चित्रभूमि पर यथार्थ जगत के रूपाकारों का अंकन करते समय उनकी लम्बाई चौड़ाई के साथ मोटाई अथवा गहराई का भाव भी दर्शाया जाता है। यह विरोधाभासी स्थिति होती है। त्रिआयामी भ्रम उत्पन्न करने के लिये चित्रतल (अन्तराल) पर रूपों की व्यवस्था विशेष महत्त्व रखती है। आच्छादित तल व्यवस्था में आकारों को एक दूसरे के आगे पीछे अंकित करते हैं जिससे पास दूर का भ्रम दिखे। आकारों में क्षयवृद्धि द्वारा छोटा बड़ा अंकित करके उनके तान एवं रंग के वैविध्यपूर्ण प्रयोग से अन्तराल पर यथार्थवादी भ्रम उत्पन्न किया जा सकता है। आधार रेखा के नजदीक वस्तु छोटी व धूमिल तथा उसी क्रम में उससे नीचे (दर्शक के पास) की वस्तु को अपेक्षाकृत बड़ा व स्पष्ट बनाकर भी यह प्रभाव दर्शाया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. रेखा किसे कहते हैं?
2. रुप क्या है?
3. पोत के कितने प्रकार होते हैं?
4. कोणीय रेखा क्या है?
5. अन्तराल कितने प्रकार का होता है?
6. त्रिआयामी चित्र क्या है?
7. मुख्य वर्ण कौनसे हैं?
8. समीपवर्ती वर्णों के तीन नाम बताइये।
9. एकाकी वर्ण क्या है?
10. द्वितीय रंग कौनसे हैं?
11. तान को कितने भागों में बांट सकते हैं?
12. रेखांकन कितने प्रकार का होता है?
13. रेखांकन व यन्त्रों का क्या सम्बन्ध है?
14. रुप के द्वारा अभिव्यक्ति कैसे होती है?
15. चित्रकार प्राकृतिक रूप में परिवर्तन क्यों करता है?
16. वर्ण बोध किस प्रकार होता है?
17. मान का वर्ण में क्या अर्थ है ?
18. विरोधी वर्ण किसे कहते हैं?
19. तान किसे कहते हैं? इसके प्रकार बताइये।
20. चित्र में तान का क्या महत्त्व है?
21. एक वर्ण से विभिन्न तान कैसे प्राप्त करते हैं?
22. प्राप्त पोत के बारे में बताइये?
23. पोत व अन्तराल का क्या सम्बन्ध होता है?

24. पोत से चित्र में एकता कैसे लाते हैं?
25. अन्तराल विभाजन की कौन सी पद्धतियां हैं?
26. असम विभक्ति क्या है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. कला अध्य्यन में कला तत्त्वों का महत्व बताते हुए सविस्तार लिखिये।
2. आकार पर रेखा का क्या प्रभाव पड़ता है? इससे आकार में क्या परिवर्तन होते हैं? समझाइये।
3. चित्र में रंग–योजना के महत्त्व को उदाहरण सहित समझाइये।
4. अन्तराल का चित्र में क्या महत्त्व है तथा उसे किस प्रकार क्रियान्वित किया जाता है?
5. पोत के प्रकार बताते हुए उनके अन्वेषण के तरीके उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए?